स्पर्श

जयवन्त दलवी

चित्राँकन
सुजाता सिंह

जयवन्त दलवी

श्री जयवन्त दलवी मराठी भाषा के वरिष्ठ लेखक थे। इनकी प्रसिद्ध रचनाओं में नाटक, उपन्यास एवं कथा संग्रह हैं। इनकी अनेक कृतियों का अनुवाद हिन्दी तथा अन्य भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में हुआ है और चर्चा का विषय रहा है।

व्यक्ति के अंतर्मन को लेखनी के द्वारा कागज़ पर उतारने की भावना ही इनकी लगभग समस्त रचनाओं का केन्द्र बिंदु रही है। स्त्री-पुरुष के संबंधों के इर्द-गिर्द इनकी कई कहानियों का जन्म हुआ है। इनके कई नाटक अभूतपूर्व रूप से प्रसिद्धि पा चुके हैं जिनमें "महासागर", "संध्याछाया" एवं "पुरुष" उल्लेखनीय हैं। इनके कथा संग्रहों में प्रमुख हैं, *स्पर्श, रूक्मिणी* एवं *स्वपनरेखा*। इनके लगभग चौदह उपन्यास हैं, जिनमें *धर्मानंद, महानंदा, स्वागत* एवं *चक्र* बहुत प्रसिद्ध हुए। *महानंदा* पर मराठी में एवं *चक्र* पर हिन्दी में फिल्म निर्माण हो चुका है। *चक्र* में इन्होंने झुग्गी-झोंपड़ियों में जीवन व्यतीत करने वालों का अत्यंत मार्मिक एवं जीवंत वर्णन किया है अन्यथा इनकी लगभग सभी रचनायें मध्यवर्गीय जीवन शैली पर ही आधारित हैं।

श्री दलवी नाटक, व्यंग एवं कहानी, सभी विधाओं में पारंगत थे। इनकी रचनाओं में समकालीन जीवन की कठिनाईयाँ, संघर्ष एवं मानव हृदय पर इस जीवन शैली के प्रभाव की स्पष्ट छाप झलकती है।

KATHA

पहला संस्करण 1997, दूसरा संस्करण 2004, तीसरा संस्करण 2009
चौथा संस्करण 2010, पाँचवाँ संस्करण 2010
कृति स्वामित्व © कथा, 1997
सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की आज्ञा के बिना इस किताब के किसी भी भाग को छापना अथवा अन्य किसी पुनः प्रयोग विधि के रूप में प्रतिकृति या इस्तेमाल वर्जित है।
नई दिल्ली द्वारा मुद्रित
ISBN 978-81-85586-56-4

कथा एक पंजीकृत अलाभकारी संस्था है। कथा का मुख्य उद्देश्य है, बच्चों और बड़ों में पढ़ने में रुचि एवं इससे मिलती खुशी को बढ़ावा देना।

ए-3 सर्वोदया एनक्लेव, श्री औरोबिन्दो मार्ग, नई दिल्ली–110017
दूरभाषः 2652 4350, 2652 4511
फैक्सः 2651 4373
ई मेलः kathakaar@katha.org
इंटरनेटः http://www.katha.org

कथा नियमित रूप से पेड़ लगाती है उस लकड़ी के बदले, जिससे हमारी किताबों को छापने का कागज़ बनता है।
इस किताब की बिक्री से मिली राशि का 10% अल्पाधिकारी बच्चों के एक स्कूल, कथाशाला को दिया जाएगा।

स्पर्श

लेखक

जयवन्त दलवी

चित्राँकन

सुजाता सिंह

(मूल भाषा मराठी से अनूदित व रूपांतरित)

कथा, नई दिल्ली

सायँकाल की सुनहरी किरणें अब तक ज़मीन पर उतरी नहीं थीं। इस बड़े पीपल की शाखों के बीच से, छनकर आती लग रही थीं। हवा के स्पर्श से पूरा वृक्ष गुदगुदाकर मानों हँस रहा था।

तने के एक खोखल में से एक तोता चोंच निकाले झाँक रहा था। एक शाख़ पर लम्बा-सा घोंसला लटक रहा था। किस पक्षी का था, कौन जाने?

वृक्ष के नीचे, आसमान की ओर ताकते, रामाराव खड़े थे। उनके आँसू आँखों तक ही सिमट रहे थे, इसका किसी को पता न था।

आज आँखें न जाने क्यों भर आई हैं। चार वर्ष पूर्व जब नानी आश्रम गई थीं, तब भी आँखें इतनी तो नम नहीं थीं। आज तो वह ठीक होकर वापिस आ रही हैं, आज तो मन में आनन्द होना चाहिये। पर आनन्द हो रहा है क्या?

पीपल के नीचे, एक पूरी मंडली नानी की बाट जोह रही थी। नानी का बेटा, वीनू। उसकी पत्नी, अनुराधा। उनका आठ वर्ष का बेटा रंगा, आस-पड़ोस की औरतें और बच्चे, सभी जमे हुए थे।

"रंगा, दादी के बुलाने पर भी पास नहीं जाना समझे!" अनुराधा रंगा को बार-बार समझा रही थी।

रामाराव को यह अच्छा नहीं लगा। डाक्टरों ने तो कह ही दिया है कि वे अब पूरी तरह स्वस्थ हो चुकी हैं।

"भैयाराम और उन्हें अब तक आ जाना चाहिये था।"

"रुको, बस की आवाज़ आ रही है।" पड़ोस की काकू सबको चुप कराती हुई, कान लगाकर सुनने लगी।

पर रामाराव को ऐसा नहीं लगा। पिछले एक घंटे में उन्हें गाड़ी की आवाज़ कई बार सुनाई पड़ी थी।

"आ गई रे, आ गई!" काकू फिर चिल्लाईं। सचमुच इस बार आवाज़ आई थी। चबूतरे पर बैठी मंडली खड़ी हो गई।

रामाराव दगड़ पत्थर की तरह खड़े थे। उनकी दृष्टि पीपल के नीचे, गणेश जी की पुरानी मूर्ति पर पड़ी। वहाँ दीप जलाना दगड़ परिवार का नियम था।

"अनु, अँधेरा हो रहा है, मूर्ति के सामने दीया जला दो, उन्हें अच्छा लगेगा।"

"जी, अच्छा!"

अनु ने गणपति के सामने, दीप जलाकर रख दिया।

दीये की मन्द लौ, हवा के झोंके में लहरा रही थी। उस प्रकाश में मूर्ति कितनी शांत दिखाई दे रही थी! मूर्ति के हाथों की उंगलियाँ, पानी और हवा की मार से घिस-सी गई थीं। सूँड़ के ऊपर भी खरोंच जैसे निशान थे। लम्बे कान भी टूट-फूट गये थे। न जाने कब से रामाराव इसे देखते आ रहे थे। पर इसके भीतर स्थित शक्ति का आभास, उन्हें आज से पहले कभी नहीं हुआ था।

बस फाटक के पास आकर रुक गई।

पहले भैयाराम उतरा, फिर उसने सहारा देकर, नानी को उतारा।

"इतनी देर कैसे हो गई भैयाराम?" वीनू ने दूर से ही पूछ लिया।

"टायर पंचर हो गया था ..." भैयाराम सामान उतारते हुये बोला।

"नकटी की शादी में लाखों विघ्न!" कहकर नानी खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

उनके हँस पड़ने से सारा वातावरण उज्जवल हो गया।

चार वर्ष पहले नानी जब अपना घर छोड़कर अमरावती आश्रम गई थीं, तो सोचा था कि शायद अब लौटकर कभी न आ सकें। जाते समय, घर की प्रत्येक वस्तु को अन्तिम स्पर्श कर गई थीं। गणेश जी को प्रणाम और हाथ से स्पर्श कर, दो पल उनके सम्मुख बैठी थीं।

उसी घर में लौट आने पर उनका आनन्दित होना स्वाभाविक ही था। नानी के होंठ, उनके मुँह पर फैल-से गये थे। और उनके चेहरे पर खुशी झलक रही थी।

"रंगा, ले गेंद!" नानी ने रंगा को पुकारा।

पर रंगा अनुराधा का आँचल थामें खड़ा रहा। हिला तक नहीं।

"भूल गया है शायद! एक बार पहचान गया तो पीछा नहीं छोड़ेगा!" कहकर अनु ने रंगा को और पीछे सरका लिया।

"बाद में आ जायेगा, माँ!" वीनू बोला।

सीढ़ियाँ चढ़ने के लिए नानी ने हाथ आगे बढ़ाया।

"सहारा दे भैयाराम ..." वीनू चिल्लाकर बोला।

भैयाराम का सहारा ले, नानी ऊपर चढ़ीं और चबूतरे पर रुक गईं।

"मैं सोच रही थी, गणेश जी की दीया बत्ती कोई करता था या नहीं।"

"तुम जैसा छोड़ गईं थीं, सब वैसे ही चल रहा है। गणेश जी को प्रणाम कर लो!" रामाराव ने जवाब दिया।

नानी ने गणेश जी के आगे सिर झुकाया और उनके सम्मुख बैठ गईं। उदास शाम के धुँधलके में, उन्होंने चारों ओर नज़र दौड़ाई। बच्चे उनकी ओर दृष्टि जमाये थे जैसे कोई नई वस्तु आई हो। नानी मुस्कुरा रही थीं।

मन में आनन्द हो, तो और कुछ नज़र नहीं आता।

तभी काकू आकर नानी से मिलीं। बरसों बाद मिली पड़ोसनें बातों में रम गईं।

बातों-बातों में उसने नानी की नाक, होंठ ध्यान से देख डाले। उन पर खरोंच के से सफ़ेद दाग थे।

उसी समय गौशाला में गाय रंभा उठी।

"पहचान लिया उसने मुझे।" नानी हँसते हुए बोलीं।

नानी और रामाराव गौशाला की ओर बढ़ गये।

नानी ने गाय की एक थपकी ली और उसके मुँह पर प्यार से हाथ फेरने लगीं।

नानी घर में आ गईं। हाथ-मुँह धोकर, चाय पीने के लिए चबूतरे पर आकर बैठ गईं।

"आप यहाँ कोई काम नहीं करेंगी नानी।" अनु आकर बोली।

"क्यों?

"आपको केवल आराम करना है!"

"किसने कहा? वीनू ने?" कहकर नानी हँस पड़ीं।

आज उनका हँसने का दिन था।

शाम को नानी दूध का बर्तन उठाकर, गौशाला की ओर जाने लगी।

"क्या कर रही हैं आप?" अनु देखकर चौंक पड़ी।

"दूध निकालने जा रही हूँ।"

"आप बर्तन रख दें। आपको काम नहीं करना है।"

"अरे, आश्रम में मैं खाना पकाती थी!"

"वहाँ डॉक्टर थे! यहाँ कौन दौड़-धूप करता फिरेगा?"

"कुछ नहीं होगा।" कहकर वे चल पड़ीं।

"आप बर्तन रख दीजिये!" अनु की आवाज़ में सख़्ती थी। नानी ने बर्तन वहीं रख दिया। उनके कलेजे में हूक-सी उठी। उनका अपमान हुआ था।

वे उसी समय भीतर चली गईं। मुँह पर पल्ला डालकर रोती रहीं। सोते समय उन्होंने निश्चय किया। घर मेरा है, सबको मेरे आदेश मानने होंगे। आश्रम में दस-पन्द्रह का भोजन बनाती थी। यहाँ कैसी मेहनत?

वे मुँह अँधेरे ही उठ बैठीं। स्नान के बाद, आटे का डिब्बा लिया और आटा गूँध कर रोटियाँ सेकने लगीं।

उठकर अनु ने चूल्हे के पास, रोटियों का ढेर देखा।

"किसने बनाई ये रोटियाँ?"

"मैंने! और किसने?"

अनु सिर पर हाथ मारकर सुन्न खड़ी रह गई। नानी ने परवाह नहीं की और सफाई करने जुट गई।

पुरुषों के भोजन कर लेने के बाद अनु और नानी खाने बैठी थीं।

"सबने खाई थी रोटियाँ?"

"हाँ!"

"कोई कुछ बोला?"

"हाँ, ये और ससुरजी बोले, अच्छी बनी हैं!"

यह सुनकर नानी के चेहरे पर रौनक आ गई।

अनु कुछ न बोली और खाते-खाते, नानी के हाथों की उंगलियाँ देखने लगी। उन पर छोटे से नाखून थे। टेढ़ी-मेढ़ी उंगलियाँ। नानी उन्हीं हाथों से भोजन कर रहीं थीं।

खाना खाने के बाद, नानी घर के भीतर जाने लगीं तो वीनू दिखाई दे गया।

"वीनू, मेरे हाथ की रोटियाँ कैसी लगीं?"

"अच्छी लगीं!"

नानी आनन्दित हो, बरामदे में पहुँच गईं। वहाँ रामाराव चहलक़दमी कर रहे थे।

"आज की रोटियाँ कैसी लगीं?"

"कहाँ थी आज रोटियाँ?"

रामाराव का ध्यान अचानक वीनू की नज़रों की ओर गया, और वे झेंप गये।

नानी को दाल में कुछ काला नज़र आया। वे थोड़ी बुझ-सी गईं। घर के भीतर चटाई बिछाकर सोने का प्रयत्न करने लगीं। पर उनकी आँखों से आँसू बहने लगे।

शाम को वे चुपचाप दूध का बर्तन खोजने लगीं। माँजने वाले बर्तनों के साथ, दूध का बर्तन पड़ा था। वहीं पर रखा था, आटे का डिब्बा! सुबह तो डिब्बा आटे से भरा था। फिर माँजने के लिए क्यों रखा है ? वे सोचती हुई दूध का बर्तन उठाकर गौशाला की ओर बढ़ गईं।

पानी लेकर उन्होंने गाय के थन धोये। तभी उनकी दृष्टि, गाय के आगे पड़ी रोटियों पर ठहर गई। नानी उसी समय उठ खड़ी हुईं।

बर्तन घर में ला पटका और आँगन में बंधे झूले पर बैठी, रूँधे गले को दबाये रखने का प्रयत्न करती रहीं।

रात वे अपने कमरे में गईं। थोड़े फासले पर, दो बिछौने पड़े थे। कल भी ऐसा ही था क्या?

उन्होंने दोनों बिछौने सटा लिये। फिर रामाराव के बिछौने की ओर मुँह कर, एक हाथ सामने फैला, वे पड़ी रहीं।

रात आहट से उनकी आँख खुली।

रामाराव दीपक जला रहे थे।

फिर उन्होंने झटपट अपना बिछौना अलग खींच लिया। चूड़ियों की खनक हुई और नानी का हाथ फर्श पर आ गिरा। पर रामाराव ने हाथ उठाकर उनके बिछौने पर न रखा।

इतना भी स्पर्श नहीं।

नानी के होठों से सिसकी फूट पड़ी। पर वे रोई नहीं। बस, आँखों से पानी बहता रहा। हाथ उसी प्रकार न जाने कब तक पड़ा रहा।

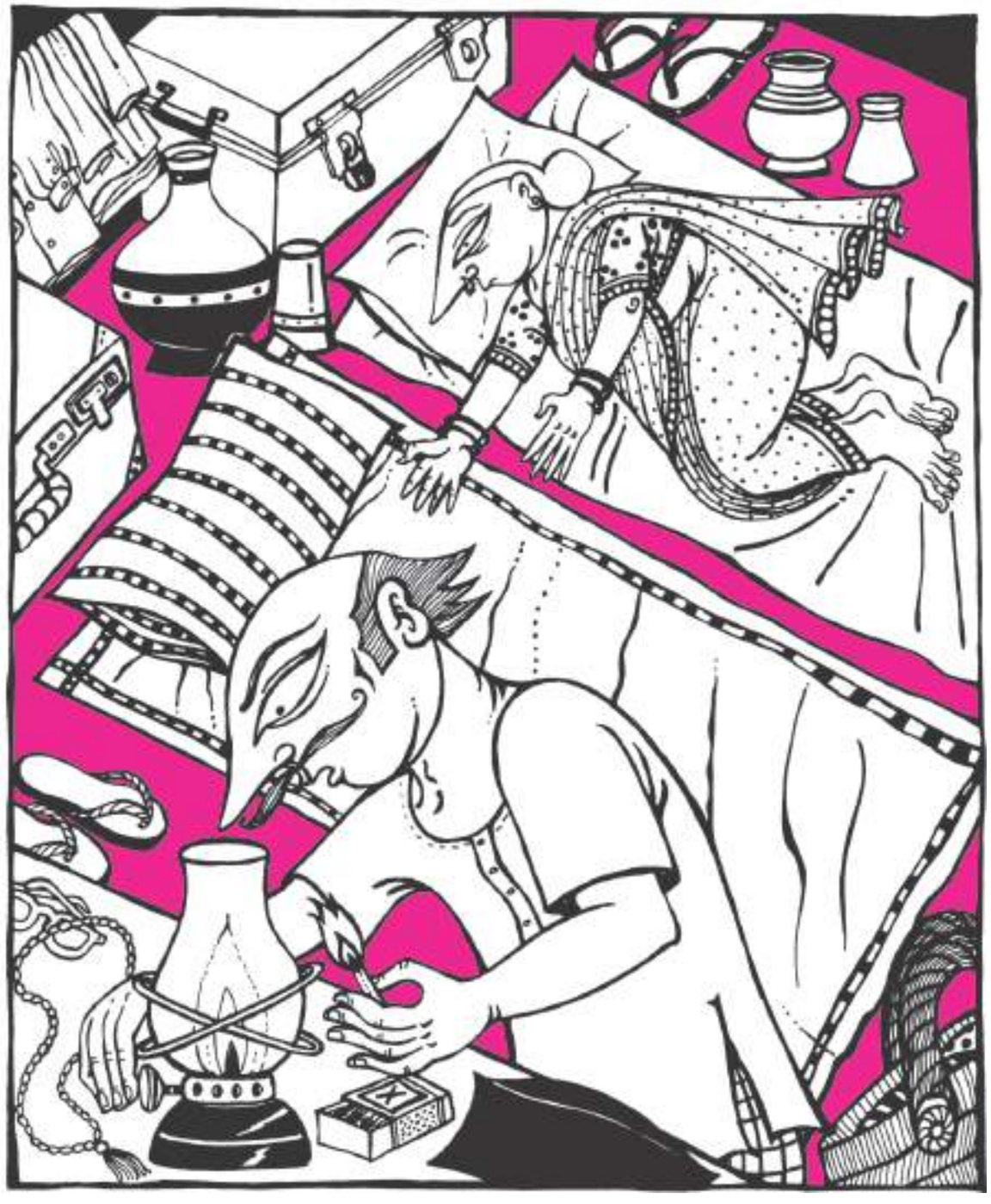

सुबह रामाराव उठकर बाहर आये। नानी पहले ही उठ गईं थीं।

"सासूजी नहीं उठीं क्या?"

"वे तो कब की उठ गईं।"

"नहीं।"

"नहीं? अरे वीनू ..." रामाराव चीख़ पड़े।

वीनू भागता हुआ आया। सब जगह खोज हुई। सभी कमरे देख डाले पर नानी कहीं नहीं थीं।

पीपल के नीचे, दीप जल रहा था। गणेश जी के मस्तक पर चंदन का तिलक और सूँड़ पर जसवंती के फूल थे।

"कहाँ गईं होंगी?"

चारों ओर आदमी दौड़ा दिये गये।

बाद में पता चला कि नानी बस अड्डे पर, अमरावती की बस में बैठी दिखाई दी थीं।

क्या आप जानते हैं?

इस कहानी में नानी माँ के हाथ की छुई हुई किसी भी वस्तु से उनके परिवार के लोग क्यों दूर भागते हैं?

नानी माँ कुष्ठ यानि कोढ़ की रोगी हैं। इस रोग के बारे में न केवल नानी के परिवार वाले अपितु लगभग सभी, गलत धारणाओं के शिकार हैं।

आईये इस रोग के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त करें:-

- **कुष्ठ रोग छूने से नहीं फैलता।**
- **यह वंशानुगत रोग भी नहीं है।**
- **यह रोग एक कीटाणु (बैक्टीरिया) द्वारा होता है।**
- **यह रोग केवल मानव जाति में पाया जाता है।**
- **इस रोग का संपूर्ण उपचार संभव है।**
- **यह रोग कोई श्राप या अभिशाप नहीं हैं।**
- **शीघ्र उपचार से कुरूपता या अपंगता पर नियंत्रण पाया जा सकता है।**

●●●●●

आईये, रूपचन्द से इस रोग के बारे में उनके अनुभव की जानकारी प्राप्त करें।

मैं रूपचन्द हूँ।

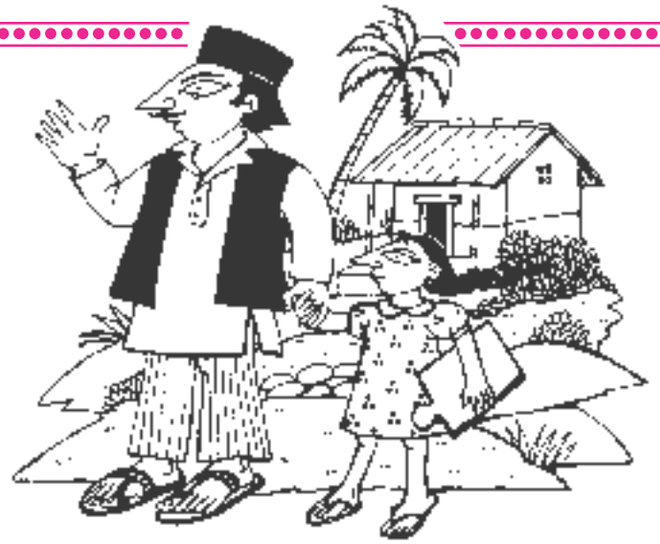

अभी-अभी आपने पढ़ा कि नानी के हाथ की छुई किसी भी वस्तु से उनके परिवार वाले दूर भागते हैं। दरअसल नानी भी मेरी तरह कुष्ठ रोग से पीड़ित थीं। हम दोनों तपोवन आश्रम अमरावती में अपना इलाज करवा रहे थे। और अब तो हम पूरी तरह स्वस्थ हो चुके हैं।

हाथ बढ़ायें, मित्र बनायें! स्पर्श से रोग नहीं, अपनापन फैलता है!

मुझे जब यह रोग हुआ तो मैं समझा कोई चमड़ी का रोग है। सोचा ठीक हो जायेगा। किसी को नहीं बताया। न ही इलाज करवाया। यही मेरी भूल थी। फिर भी लोगों को पता चल ही गया।

सब मुझसे दूर हो गये। मैं अकेला और मायूस हो गया। मेरे हाथ और चेहरे पर दाग़ और सूजन हो गई।

एक दिन एक स्वास्थ्यकर्ता मिलने आये। उन्होंने मुझे अमरावती में इलाज कराने की सलाह दी। वहाँ मैंने इलाज करवाया और अब मैं ठीक हूँ। वहाँ मुझे पता लगा कि कुष्ठ रोग छूने से नहीं फैलता और न ही यह किसी तरह का श्राप है। रोगी को इलाज के साथ प्यार भी चाहिये।

मेरी आप सबसे विनती है कि अगर आस-पास किसी भाई या बहन को इस रोग से पीड़ित देखें तो उससे दूर न भागें। उनको अपना मित्र बनायें। उन्हें इलाज करवाने को प्रेरित करें।

इस बारे में अधिक जानकारी के लिये इस पते पर लिखें :

दि लैप्रसी मिशन ट्रस्ट, इंडिया
सी. एन. आई. भवन,
16 पंडित पंत मार्ग,
नई दिल्ली-110001
फोन: 011-23718261

कहानी के कठिन शब्दों के अर्थ

नीचे दिये गये शब्द, इसी कहानी से लिये गये हैं। इन शब्दों के सरल अर्थ भी दिये गये हैं। इन्हें अपनी बोलचाल की भाषा में प्रयोग करने का प्रयास करें।

स्पर्श	छूना
प्रयत्न	चेष्टा, कोशिश
आभास	ज्ञान, झलक
परवाह	चिंता, ध्यान
निश्चय	पक्का इरादा
वातावरण	आस-पास की परिस्थिति
उज्जवल	स्वच्छ, साफ़
स्वाभाविक	प्राकृतिक, कुदरती
अपमान	अनादर, बेइज़्ज़ती
सम्मुख	सामने, समक्ष

उल्टा-सीधा एक समान

कुछ शब्द ऐसे हैं जो चाहे सीधे पढ़े जायें या उल्टे, उनका रूप और अर्थ वही रहता है। हमने पांच शब्द दिये हैं: कड़क, नमन, पनप, सहस और कसक। बाकि पांच के कुछ अक्षर आपको खोजने हैं।

स		स
ज		ज
क		क
द		द
	ब	

शब्दों का खेल

● यह खेल दो या दो से अधिक खिलाड़ी खेल सकते हैं।

● हर खिलाड़ी अलग रंग का बटन या गोली ले और **1** नंबर खाने के बाहर रख दे।

● एक सिक्का लें। उसे उछालने पर चित्त आये तो एक घर चलें। पट आये तो दो घर। इस प्रकार तीर की दिशा में बढ़ते रहें। सबसे छोटा खिलाड़ी पहले शुरू करे।

● जो खिलाड़ी जिस घर में पहुँचे उसके शब्द अपने पास एक कागज़ पर लिख ले। इस प्रकार **25**वें घर तक चलते रहें। जब सब खिलाड़ी खेल चुकें हों, तो अपने-अपने पास लिखे शब्दों से वाक्य बनायें।

जो सबसे पहले दो वाक्य बनायेगा, वही होगा विजेता!

यह कहानी एक नानी की भावनाओं और जीवन के संध्याकाल में, उनके द्वारा लिए गए साहसिक निर्णय का सजीव चित्रण है।

सर्वश्रेष्ठ कथामाला भारत के महान लेखकों की एक शानदार कहानी श्रृंखला है। आइऐ अपने देश के साहित्य का खजाना खोजें, इन कहानियों और इनसे जुड़े खेलों और अभ्यासों के ज़रिये !

इस पुस्तक की कहानी मराठी भाषा के सुप्रसिद्ध लेखक **जयवन्त दलवी** ने लिखी है।